9 अक्टूबर 2000 नई दुनिया

आश्चर्यजनक है म्यांमार में सैनिक सत्ता की मजबूती

शशिधर खाँ

भारत और चीन के पड़ोस में स्थित म्यांमार के क्रूर सैनिक शासन के खिलाफ वहाँ की जुझारू नेता ५३ वर्षीय श्रीमती आंग सान सू की ने एक बार फिर लोहा लिया है। अबकी वे इस बात पर आमादा हैं कि चाहे कुछ भी हो जाए, जनतंत्र की बहाली के लिए कोई कसर बाकी नहीं रखेंगी। सभी विपक्षी दलों को मिलाकर बना गठबंधन नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी (एनएलडी) की अध्यक्ष श्रीमती सू की पिछले एक दशक से अपने देश की जनता को नागरिक अधिकार दिलाने के लिए संघर्षरत हैं और जनता भी उनका भरपूर साथ दे रही है। इसलिए सैनिक सरकार हमेशा उन्हें अपने घर में नजरबंद रखती है। अगर घर से बाहर निकलने की छूट मिलती है तो बस अहाते भर। आम लोगों से मिलने अथवा किसी जनसभा को संबोधित करने पर कड़ी पाबंदी रहती है, क्योंकि जनसैलाब पर काबू पाना सैनिकों के लिए कठिन हो जाता है। प्रायः श्रीमती सू की के घर के टेलीफोन का तार कटा ही रहता है। अंतरराष्ट्रीय दबाव के आगे अगर कभी उन्हें दो-चार दिनों के लिए मुक्त भी कर दिया जाता है तो फिर उनकी गतिविधियों पर अंकुश रखने के लिए कोई न कोई उपाय निकाल लिए जाते हैं।

यूँ तो जब से श्रीमती सू की ने जनतांत्रिक आंदोलन की कमान संभाली है (१९८८) उस समय से उनके साथ जो कुछ गुजरा है, उसकी मिसाल अन्यत्र कम ही देखने को मिलती है। मगर इस बीच की घटना तो म्यांमार और उसके पड़ोसी देशों के लिए ऐतिहासिक है। चूँकि इनका आंदोलन शांतिपूर्ण है और दमनात्मक कार्रवाई का जवाब वे शुरू से मानवीय तथा आम जनता के मर्म को छूने वाले तौर-तरीकों से दे रही हैं, इसलिए सिर्फ बंदूक के बल पर सत्ता से चिपके रहने वाले जनरलों में घबराहट है।

सितंबर के प्रथम सप्ताह में एनएलडी अध्यक्ष अपने गठबंधन के समर्थकों के साथ राजधानी से जब बाहर निकलीं तो चारों तरफ से सुरक्षा बलों ने उन्हें घेर लिया। ऊपर से आदेश था कि उन्हें शहर से बाहर जाने से रोक दिया जाए। श्रीमती सू की को उपनगरीय इलाके में कई जनसभाओं को संबोधित करना था, जिसमें वे जनता को बताना चाहती थीं कि देश के लिए नए संविधान की क्या रूपरेखा होगी। सेना भला ऐसा क्यों होने दे, क्योंकि वे जो नया संविधान बना रही हैं, उसमें सेना की भूमिका अन्य जनतांत्रिक देशों की तरह सिर्फ आंतरिक व बाह्य सुरक्षा तक ही सीमित रखने की बात है। श्रीमती सू की के धरना आंदोलन का प्रचार होते देर न लगी और पश्चिम जगत में हंगामा मच गया। आखिरकार सैनिकों ने श्रीमती सू की और उनके समर्थकों को बलपूर्वक वहाँ से हटाया, लेकिन तब तक तो उस समय चल रहे संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दी सम्मेलन में यह चर्चा गूँज उठी थी। सबसे पहले यह मामला ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री टोनी ब्लेयर और अमेरिकी राष्ट्रपति श्री बिल क्लिंटन ने उठाया, जिसका समर्थन १५० देशों ने किया। शायद उसी हंगामे का असर है कि अभी तक श्रीमती सू की को शहर के अंदर घूमने की छूट मिली हुई है। संभव है, मामला गरम होने के चलते कुछ दिनों के लिए छोड़ दिया गया हो, लेकिन जनता के बदलते तेवर को देखते हुए लगता नहीं है कि ज्यादा दिनों तक सैनिक शासन लोगों की आवाज दबाए रखने में सफल हो पाएगा।

सबसे कमाल तो है म्यांमार के सैनिक शासन के प्रति चीन और भारत का अनुकूल रवैया। इसके पीछे सिवाए व्यापारिक स्वार्थ के और कुछ नहीं है। चीन का तो चलिए फिर भी मान लेते हैं, क्योंकि वहाँ जनतंत्र के दमन का किस्सा पुराना है, लेकिन भारत तो विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। म्यांमार के प्रति भारत ने ऐसा रुख अपना रखा है कि मानो वहाँ कोई बवेला हो ही नहीं रहा हो। जिस वक्त श्रीमती आंग सान सू की का धरना चल रहा था, उसी समय भारत के गृह सचिव श्री कमल पांडे उत्तर-पूर्व में म्यांमार की सीमा से लगे इलाकों में वर्षों से चल रही विद्रोही गतिविधियों के बारे में विचार-विमर्श करने म्यांमार गए, मगर श्रीमती सू की कहीं चर्चा में नहीं आईं। म्यांमार के जरिए उत्तर-पूर्व के विद्रोहियों को काफी समय से हथियार व सैनिक प्रशिक्षण मिलता रहा है। उसके रास्ते मणिपुर, नगालैंड और असम के विद्रोही नेताओं को चीन आने-जाने में आसानी होती है। विश्व में लोकतंत्र का जबर्दस्त हिमायती भारत म्यांमार के मामले में लाचार है। यह लाचारी दलाईलामा से मिलती है। एक ओर चीन जैसे ताकतवर देश से बिगाड़ मोल न लेने का डर है तो दूसरी तरफ व्यापारिक स्वार्थ हावी है। वैसे श्रीमती सू की के प्रति भारत की जनता की अपार सहानुभूति है।

सन् १९९८ की एक घटना दिल दहलाने वाली है, जब श्रीमती सू की के ब्रितानी पति श्री माइकेल एरिस की कैंसर से लंदन में मृत्यु हो गई। उन्होंने मौत करीब आते देख म्यांमार के शासकों के पास वीजा की अर्जी भेजी थी। बार-बार के आग्रह और दर्जन भर अंतरराष्ट्रीय अपीलों को ठुकारते हुए जनरलों ने उन्हें म्यांमार आने का वीजा नहीं दिया। पत्नी और बच्चों को अंतिम क्षण में एक बार देख लेने की श्री माइकेल एरिस की आस पूरी नहीं हो पाई। पूरा म्यांमार खौल उठा और स्थिति बिगड़ने की आशंका के मद्देनजर श्रीमती सू की के आवासीय परिसर को लगभग सैनिक छावनी में बदल दिया गया। 'लॉ एंड ऑर्डर रेस्टोरेशन कौंसिल' के नाम पर सैनिक परिषद के संचालक शान श्वे ने उस पर भी यह सफाई देकर जनता को गुमराह करने की कोशिश की कि श्रीमती सू की के पति को म्यांमार आने की इजाजत नहीं दी जा सकती। हाँ, अगर वे स्वयं लंदन जाना चाहें तो विचार किया जा सकता है। श्रीमती सू की ने यह कहकर प्रस्ताव ठुकरा दिया कि वे जनता के लिए जीती हैं, अपने पति के लिए नहीं। अगर सरकार इतनी संवेदनशील है तो उनके पति को म्यांमार आने का वीजा दे दे।

सैनिक अधिकारी देश की बौद्ध बहुल आबादी को कहते रहे हैं कि श्रीमती सू की ने बौद्ध होकर ब्रितानी से शादी की है, इसलिए इस देश में सत्ता में आने का उन्हें नैतिक अधिकार नहीं है, मगर जनता ने इसे आज तक स्वीकार नहीं किया और पाबंदियों के बावजूद लोग श्रीमती सू की की एक झलक पाने को उतावले रहते हैं। यह वाकई बड़े ताज्जुब की बात है कि गत वर्षों में विश्व की बड़ी-बड़ी निरंकुश शासन व्यवस्था की नींव हिल गई, वहीं म्यांमार के मामले में अमेरिका व ब्रिटेन जैसे देश भी महज धमकी भर देकर रह जाते हैं। कभी-कभी व्यापार व आर्थिक प्रतिबंध लगाने की भी गीदड़भभकी दी जाती है, मगर असर होना होता तो उसके लिए ११ वर्ष कम नहीं होते।

वैसे भारतीय उपमहाद्वीप में सैनिक शासन अजूबा नहीं है। पाकिस्तान और बांग्लादेश में यह प्रयोग होता रहा है। पाकिस्तान में तो यह अब भी कायम है। मगर म्यांमार में १९६२ में जनरल ने विन द्वारा कायम की गई बुनियाद का न हिलना आश्चर्यजनक है। उसी वर्ष श्रीमती सू की के पिता श्री आंग शान की ने विन ने साजिश करके हत्या करवा दी थी। हालाँकि सारे सैनिक जनरल उम्र ढलने के कारण सत्ता पर पकड़ ढीली महसूस कर रहे हैं। शान श्वे लगातार अस्पताल में है। उसने माऊंग थे के हाथ में बागडोर सौंप दी है। मगर जब तक शक्तिशाली योरपीय देश हस्तक्षेप नहीं करेंगे, तब तक परिवर्तन की गुंजाइश नहीं लगती। उन्हीं के दबाव में १९९५ में श्रीमती सू की १९९० के बाद से लगातार नजरबंदी से मुक्त हुई थी और जनरलों की चेतावनी के बावजूद लगभग सभी देशों के राजनयिकों ने श्रीमती सू की के आवास पर जाकर उनका हौसला बढ़ाया है।

म्यांमार में सैनिक शासकों का दमन-चक्र जारी है। वैसे जनतांत्रिक आंदोलन की नेता सुश्री आंग सान सू की के शांतिपूर्ण आंदोलन और जनता के मर्म को छू लेने वाले तौर-तरीकों से जनरलों में घबराहट भी व्याप्त है। यह बड़े ताज्जुब की बात है कि गत वर्षों में विश्व की बड़ी-बड़ी निरंकुश शासन व्यवस्थाओं की नींव हिल गई, लेकिन म्यांमार पर सैनिक शासन का शिकंजा कायम है। अमेरिका और ब्रिटेन जैसे देश भी उसे महज धमकी देकर रह जाते हैं। चीन तो म्यांमार के शासकों का सबसे बड़ा मित्र व शुभचिंतक है ही, भारत भी व्यापारिक स्वार्थ के मद्देनजर ऐसा बर्ताव कर रहा है मानो म्यांमार में कुछ भी असामान्य न हो रहा हो।